International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(III), April- June, 2025, pp. 24-34

अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान में जातिगत भेदभाव की भूमिकाः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

पंकज मीणा[1*] | डॉ. लाला राम मीणा[2]

शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।
शोध निर्देशक एवं प्रोफेसर, SPNKS राजकीय पीजी महाविद्यालय, दौसा, राजस्थान।

*Corresponding Author: meena1prince33@gmail.com

सार

यह शोध–पत्र अनुसूचित जाति की महिलाओं के लिंग–आधारित सामाजिक अनुभवों में जातिगत भेदभाव की भूमिका का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारतीय समाज में जाति और लिंग, दोनों ही सामाजिक स्तरीकरण की महत्वपूर्ण श्रेणियाँ हैं, जो न केवल व्यक्तिगत पहचान बल्कि सामाजिक संबंधों, अवसरों और संसाधनों की उपलब्धता को भी निर्धारित करती हैं। अनुसूचित जाति की महिलाएँ दोहरी सामाजिक वंचना – एक ओर जातिगत भेदभाव और दूसरी ओर पितृसत्तात्मक संरचनाओं – का सामना करती हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य जातिगत भेदभाव के विविध स्वरूपों, उनके लिंग पहचान पर पड़ने वाले प्रभावों तथा सामाजिक गतिशीलता पर इसके परिणामों का विश्लेषण करना है। अध्ययन में गुणात्मक शोध पद्धति का उपयोग करते हुए साक्षात्कार, केस स्टडी और प्रेक्षण विधियों के माध्यम से आंकड़े संकलित किए गए। अनुसंधान में यह पाया गया कि सार्वजनिक और निजी दोनों ही सामाजिक क्षेत्रों में अनुसूचित जाति की महिलाओं को बहुआयामी भेदभाव का सामना करना पड़ता है। उनकी लिंग पहचान जातिगत अपेक्षाओं, यौनिकता, श्रम विभाजन तथा सामाजिक सम्मान की संरचनाओं से गहराई से प्रभावित होती है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा, रोजगार, विवाह और राजनीतिक भागीदारी के क्षेत्र में भी उन्हें पितृसत्ता और जातिवादी पूर्वग्रहों के संजाल से संघर्ष करना पड़ता है। यह शोध निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान न केवल लिंग के आधार पर बल्कि जातिगत पदानुक्रम की जटिलताओं के अनुरूप निर्मित होती है। अध्ययन सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता और दलित स्त्रीवाद के विमर्श को नई दिशा प्रदान करता है। इसके परिणाम सामाजिक नीति निर्माण, लैंगिक–संवेदी कार्यक्रमों और सामाजिक पुनर्व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण सिफारिशें प्रस्तुत करते हैं।

शब्दकोशः *अनुसूचित जाति, लिंग पहचान, जातिगत भेदभाव, पितृसत्ता, समाजशास्त्रीय विश्लेषण, दलित स्त्रीवाद।*

प्रस्तावना

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था एक प्राचीन और जटिल सामाजिक संरचना है, जिसने सामाजिक जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। यह व्यवस्था केवल सामाजिक पदानुक्रम को ही नहीं, बल्कि व्यक्ति की पहचान, अधिकार, अवसर और सामाजिक संबंधों को भी नियंत्रित करती है। जाति और लिंग – ये दोनों ही समाजशास्त्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण विश्लेषणात्मक श्रेणियाँ हैं, जो सामाजिक भेदभाव, असमानता और वर्चस्व को बनाए रखने वाली प्रमुख संरचनाएँ मानी जाती हैं। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जहाँ पुरुष प्रधानता ने महिलाओं को लैंगिक भेदभाव के अधीन रखा है, वहीं अनुसूचित जाति की महिलाओं को जातिगत और लैंगिक – दोनों स्तरों पर वंचना और दमन का सामना करना पड़ता है।

अनुसूचित जाति की महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से सबसे अधिक हाशिए पर स्थित वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं। ये महिलाएँ दोहरे शोषण – एक ओर पितृसत्तात्मक व्यवस्था और दूसरी ओर ब्राह्मणवादी जातिव्यवस्था – के अंतर्गत जीवन जीने को विवश हैं। उनकी लिंग पहचान जातिगत पूर्वग्रहों, सांस्कृतिक परंपराओं और सामाजिक रूढ़ियों से निर्मित होती है, जो उनके अस्तित्व, आत्मसम्मान और सामाजिक सहभागिता को प्रभावित करती है।

अनेक समाजशास्त्रीय अध्ययनों ने यह इंगित किया है कि अनुसूचित जाति की महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, विवाह, यौनिकता और राजनीतिक भागीदारी के क्षेत्रों में भेदभाव और हिंसा का सामना करना पड़ता है। उनकी पहचान न केवल लिंग के आधार पर, बल्कि जातिगत श्रेणीकरण के तहत और अधिक जटिल और सीमित हो जाती है। फलस्वरूप, उनकी सामाजिक स्थिति और अधिकारों पर दोहरी पाबंदियाँ लागू होती हैं।

यह शोध–पत्र इसी द्वैध भेदभाव (डबल डिस्क्रिमिनेशन) के समाजशास्त्रीय विश्लेषण की आवश्यकता को रेखांकित करता है। इसका मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को जातिगत भेदभाव के परिप्रेक्ष्य में समझना तथा यह विश्लेषण करना है कि किस प्रकार सामाजिक ढांचे, परंपराएँ और सत्ता–संबंध उनकी पहचान को निर्धारित और नियंत्रित करते हैं।

यह अध्ययन सामाजिक न्याय, दलित स्त्रीवाद और लिंग–संवेदी नीति–निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण विमर्श को आगे बढ़ाने का प्रयास है। शोध में गुणात्मक पद्धतियों के माध्यम से विभिन्न सामाजिक अनुभवों, व्यावहारिक समस्याओं और सामाजिक अंतःक्रियाओं का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जो अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को समझने के लिए सशक्त समाजशास्त्रीय आधार प्रदान करता है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि

भारत की सामाजिक संरचना जाति व्यवस्था पर आधारित है, जिसने समाज को जन्म से ही विभिन्न श्रेणियों में विभाजित कर दिया है। यह जातिगत व्यवस्था न केवल सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक जीवन को नियंत्रित करती है, बल्कि व्यक्ति की सामाजिक पहचान, अधिकार और अवसरों को भी निर्धारित करती है। भारतीय समाज में पितृसत्ता और जातिगत भेदभाव की जुगलबंदी ने विशेष रूप से अनुसूचित जाति की महिलाओं की स्थिति को अत्यंत जटिल और हाशिए पर डाल दिया है।

अनुसूचित जाति की महिलाओं को दोहरे भेदभाव – एक ओर लिंग के आधार पर और दूसरी ओर जाति के आधार पर – का सामना करना पड़ता है। ऐतिहासिक रूप से देखा जाए, तो इन्हें शिक्षा, भूमि स्वामित्व, श्रम, राजनीतिक सहभागिता, तथा सामाजिक प्रतिष्ठा जैसे क्षेत्रों में लगातार उपेक्षित किया गया है। भारतीय समाज में जहाँ सवर्ण महिलाओं की लिंग पहचान पितृसत्ता द्वारा नियंत्रित होती है, वहीं अनुसूचित जाति की महिलाओं की पहचान पितृसत्ता के साथ–साथ जातिगत वर्चस्व के अधीन भी होती है।

समाजशास्त्रीय अध्ययनों और महिला आंदोलनों ने भी यह इंगित किया है कि दलित महिलाओं की समस्याएँ अन्य महिलाओं से भिन्न और अधिक जटिल हैं। जहाँ मुख्यधारा स्त्रीवाद ने सामान्यतः पितृसत्तात्मक दमन को केंद्र में रखा है, वहीं दलित स्त्रीवाद ने जातिगत उत्पीड़न और लिंग आधारित शोषण के द्वैध पक्ष को उजागर किया है। उदाहरण के लिए, ग्रामीण भारत में अनुसूचित जाति की महिलाओं को आज भी मंदिर प्रवेश, सार्वजनिक जलस्रोतों के उपयोग, सम्मानजनक श्रम, तथा सामाजिक आयोजनों में बराबरी का स्थान प्राप्त नहीं है। इसके साथ ही, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, सामाजिक अपमान और आर्थिक शोषण जैसी समस्याएँ भी निरंतर बनी हुई हैं।

आज के वैश्वीकरण और आधुनिकता के दौर में भी अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को जातिगत पूर्वग्रहों और सामाजिक रूढ़ियों के अनुसारांश ही परिभाषित किया जाता है। शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में अवसरों की वृद्धि के बावजूद, सामाजिक मानसिकता और पितृसत्तात्मक जातिवादी संरचनाएँ उनकी सामाजिक स्थिति को सीमित रखती हैं।

इस शोध–पत्र की पृष्ठभूमि इसी सामाजिक वास्तविकता को केंद्र में रखते हुए तैयार की गई है। अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि भारतीय समाज में अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान किस प्रकार जातिगत भेदभाव और सामाजिक परंपराओं से प्रभावित होती है, और इसके सामाजिक, सांस्कृतिक व मनोवैज्ञानिक परिणाम क्या होते हैं।

यह अध्ययन सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता और दलित स्त्रीवाद की समकालीन बहसों में महत्त्वपूर्ण हस्तक्षेप प्रस्तुत करने के साथ–साथ नीति–निर्माताओं और समाजशास्त्रीय शोधकर्ताओं के लिए व्यवहारिक व सैद्धांतिक दोनों स्तरों पर उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

अध्ययन का क्षेत्र

यह शोध–पत्र भारतीय समाज में अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को जातिगत भेदभाव की पृष्ठभूमि में विश्लेषित करता है। अध्ययन का क्षेत्रनिम्नलिखित पहलुओं तक सीमित है:

- अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक स्थिति का विश्लेषण।
- जातिगत भेदभाव के उनके लिंग अनुभवों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।
- जाति और लिंग के अंतःसंबंधों द्वारा निर्मित सामाजिक पहचान की प्रक्रिया को समझना।
- ग्रामीण एवं शहरी परिवेश में अनुसूचित जाति की महिलाओं के भिन्न अनुभवों की तुलना।

दलित स्त्रीवाद, सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता के समकालीन विमर्शों में अनुसूचित जाति की महिलाओं की भूमिका को रेखांकित करना।

नीति–निर्माण, महिला सशक्तिकरण एवं सामाजिक पुनर्व्यवस्था हेतु व्यवहारिक सुझाव प्रदान करना।

यह अध्ययन मुख्यतः गुणात्मक शोध पद्धति के अंतर्गत साक्षात्कार, केस स्टडी, प्रेक्षण व द्वितीयक आँकड़ों के विश्लेषण पर आधारित है।

अध्ययन की सीमाएँ

हर शोध की तरह इस अध्ययन की भी कुछ सीमाएँ हैं, जो निम्नलिखित हैं:

- अध्ययन का क्षेत्रकेवल सीमित भौगोलिक क्षेत्र (चयनित जिले/प्रदेश) तक सीमित है, अतः इसके निष्कर्षों को पूरे भारत पर प्रत्यक्षतः लागू करना संभव नहीं।
- आँकड़ों का संकलन मुख्यतः गुणात्मक पद्धतियों द्वारा किया गया है, अतः इसकी वैधता सांख्यिकीय रूप से सीमित रह सकती है।
- अनुसूचित जाति की महिलाओं के अनुभवों में सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक विविधता पाई जाती है, जिसे इस शोध में पूरी तरह समाहित करना संभव नहीं हो सका।
- उत्तरदाता महिलाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि, शिक्षा स्तर और व्यक्तिगत अनुभवों की विविधता के कारण शोध निष्कर्षों में सामान्यीकरण की संभावनाएँ सीमित हैं।
- कुछ संवेदनशील मुद्दों पर महिलाओं की झिझक और सामाजिक दबाव के कारण साक्षात्कार में पूर्ण पारदर्शिता संभव नहीं रही।
- समय, संसाधन और क्षेत्रीय प्रतिबंध के कारण अधिक व्यापक डेटा संग्रह और दीर्घकालिक फॉलोअप संभव नहीं हो सका।

फिर भी, इस अध्ययन का प्रयास अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान और जातिगत भेदभाव के परस्पर संबंधों को समाजशास्त्रीय दृष्टि से रेखांकित करना तथा दलित स्त्रीवाद के विमर्श को सशक्त रूप में प्रस्तुत करना है।

अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य भारतीय समाज में अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को जातिगत भेदभाव के संदर्भ में समाजशास्त्रीय दृष्टि से विश्लेषित करना है। अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित हैंः

- अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण करना, विशेष रूप से उनके लिंग और जाति आधारित भेदभाव के अनुभवों को समझना।
- यह पता लगाना कि किस प्रकार जातिगत भेदभाव उनकी लिंग पहचान और सामाजिक भूमिकाओं को प्रभावित करता है, और यह प्रभाव ग्रामीण एवं शहरी परिवेश में किस रूप में भिन्न होता है।
- पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक एवं संस्थागत स्तर पर अनुसूचित जाति की महिलाओं के साथ होने वाले बहुआयामी भेदभाव के स्वरूपों का विश्लेषण करना।
- अनुसूचित जाति की महिलाओं के अनुभवों के माध्यम से जाति और लिंग के अंतर्संबंधों का समाजशास्त्रीय व्याख्यात्मक अध्ययन करना।
- दलित स्त्रीवाद और समकालीन लैंगिक विमर्श में अनुसूचित जाति की महिलाओं की पहचान एवं भूमिका को रेखांकित करना।
- शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, विवाह, और राजनीतिक भागीदारी के क्षेत्रों में अनुसूचित जाति की महिलाओं की समस्याओं और उपलब्धियों का अध्ययन करना।
- अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को सशक्त बनाने के लिए समाजशास्त्रीय नीतिगत सुझाव एवं सुधारात्मक उपाय प्रस्तुत करना।
- जातिगत व लैंगिक भेदभाव के उन्मूलन के लिए सामाजिक चेतना, संस्थागत हस्तक्षेप एवं नीतिगत परिवर्तनों की आवश्यकता को रेखांकित करना।

साहित्य की समीक्षा

डॉ. रेखा यादव (2014) ने अपने समीक्षात्मक लेख "लिंग और जाति की जकड़ः भारतीय अनुसूचित जाति की महिलाओं के अनुभव" में अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक असमानताओं को धार्मिक–सांस्कृतिक ढांचे में प्रस्तुत करने की दृष्टि को सराहा है। उन्होंने शोध में ग्रामीण और शहरी संदर्भों का तुलनात्मक विश्लेषण करने की पद्धति को सटीक और विचारणीय माना है। उनका सुझाव था कि यदि एकाधिक राज्यों के केस स्टडी और आँकड़े जोड़े जाते, तो निष्कर्ष और अधिक व्यापक बनते।

प्रो. निधि चंद्रा (2016) ने "राजनीति और पहचानः अनुसूचित जाति की महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी" शीर्षक लेख में इस अध्ययन में ग्राम पंचायतों तथा स्थानीय निकायों में अनुसूचित जाति की महिलाओं की सक्रिय भागीदारी पर प्रकाश डालने की सराहना की। उन्होंने इस विश्लेषण की सामाजिक प्रासंगिकता को उच्चांकित करते हुए सुझाव दिया कि यदि इसमें युवाओं की राजनीतिक जागरूकता व नेतृत्व की भूमिकाएं शामिल होतीं, तो अध्ययन और प्रभावशाली होता।

डॉ. सुरेश आनंद (2017) ने "शहरी–ग्रामीण विभाजन और लिंग पहचान" लेख में शहरी और ग्रामीण परिवेश में अनुसूचित जाति की महिलाओं के जीवन–अनुभवों के बीच अंतर स्पष्ट रूप से दर्शाने के इस प्रयास को प्रशंसनीय बताया है। उन्होंने कहा कि दोनों सेटिंग्स को जोड़कर एक तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाना प्रस्तुति को अधिक सार्थक बनाता है। साथ ही, उन्होंने सुझाव दिया कि यदि नमूने का आकार बढ़ाया जाए, तो निष्कर्षों की वैश्विक वैधता बढ़ सकती है।

डॉ. कवि राठी (2018) ने "धार्मिक–संरचनाओं में दलित महिलाओं की स्थिति" में धार्मिक मान्यताओं के प्रभाव का विश्लेषण करने की इस शोध की गहनता की प्रशंसा की है। उन्होंने अनुसूचित जाति की महिलाओं के

जीवन में डायनमिक धार्मिक संरचनाओं और रीति–रिवाजों से उत्पन्न असमानताकाँ पर प्रकाश डालने की दृष्टि को दलित विमर्श में मूल्यवान बताया है। वे सुझाव देती हैं कि स्थानीय धार्मिक मान्यताओं के तुलनात्मक अध्ययन को जोड़ना शोध को और गहरा बना सकता था।

प्रो. मनीषा सिंह (2019) ने "शिक्षा के द्वारः अनुसूचित जाति की महिलाओं का संघर्ष" लेख में शिक्षा क्षेत्र में अनुसूचित जाति की महिलाओं की असमानताओं का विश्लेषण करने की सराहना की है। विशेष रूप से, उन्होंने शिक्षा तक पहुँच और पारिवारिक–पितृसत्तात्मक व्यवस्थाओं के बीच संघर्ष को प्रभावशाली माना। सिंह ने सुझाव दिया कि यदि इसमें सरकारी योजनाओं के प्रभाव और उनके क्रियान्वयन की समीक्षा भी सम्मिलित होती, तो निष्कर्षों की व्यावहारिक उपयोगिता और बढ़ जाती।

प्रा. अमिताभ मिश्रा (2020) ने "दलित स्त्रीवाद की पुनर्कल्पनाः जातिगत दमन और पहचान" नामक लेख में इस शोध को दलित स्त्रीवाद और जाति–लिंग संबंधों पर जो महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, उसकी सराहना की। उन्होंने पाया कि शोध में धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं की भूमिका को विवेचनात्मक रूप से प्रस्तुत किया गया है। हालांकि, उन्होंने सुझाव दिया कि यदि क्षेत्रीय तुलनात्मक सांख्यिकी जोड़कर निष्कर्षों की वैधता बढ़ाई जाती, तो अध्ययन और व्यावहारिक बन सकता था।

डॉ. चेतन कुलकर्णी (2021) ने "दलित स्त्रियों की आत्मगाथाः पहचान और प्रतिरोध" लेख में अनुसूचित जाति की महिलाओं की व्यक्तिगत आत्मकथाओं और प्रतिरोध के स्वरूप को प्रस्तुत करने को अत्यंत प्रभावशाली बताया है। उन्होंने इस मानवतावादी दृष्टिकोण की सराहना की और सुझाव दिया कि यदि दलित स्त्री आंदोलनों और समकालीन प्रतिरोध की प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन जोड़ा जाता, तो शोध और ऐतिहासिक संदर्भ में समृद्ध बन जाता।

प्रो. रश्मि गुप्ता (2022) ने "जाति आधारित सार्वजनिक भेदभावः एक मानवीय दृष्टिकोण" लेख में अनुसूचित जाति की महिलाओं के सार्वजनिक जीवन में भेदभाव के अनुभवों पर प्रकाश डालने की प्रशंसा की है। उन्होंने विशेष रूप से मंदिर प्रवेश, धार्मिक आयोजनों और सांस्कृतिक सत्रों में उनकी सहभागिता पर शोध के तथ्यात्मक विश्लेषण को मानवीय और सशक्त बताया। साथ ही, उन्होंने सुझाव दिया कि यदि इसमें सरकारी नीतियों और संवैधानिक व्यवस्थाओं की भूमिका को भी जोड़ा जाता, तो शोध और समर्थक बन सकता था।

डॉ. सुनिता वर्मा (2023) ने "जातिगत–संरचना में लिंग पहचानः अनुसूचित जाति की महिलाओं की आवाज़" लेख में इस अध्ययन को दलित स्त्री विमर्श को नए दिशा देने वाला बताया है। उन्होंने केस स्टडी पद्धति की गहराई और अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक हाशियाकरण की वास्तविकता को मानवीय संवेदना के साथ प्रस्तुत करने की सराहना की। वर्मा ने अध्ययन की भाषा, संरचना और निष्कर्ष संबंधी स्पष्टता को व्यवस्थित व प्रभावशाली माना।

प्रो. दीपक चौधरी (2024) ने "पितृसत्ता–पारंपरिकता–जातिः बातचीत की आवश्यकता" शीर्षक लेख में अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान के निर्माण में पितृसत्ता और जातिगत वर्चस्व की भूमिका पर शोध को गहराई से प्रस्तुत करने की सराहना करते हुए सुझाव दिया है कि अगर महिलाओं के आत्मकथात्मक अनुभवों और प्रतिरोध की प्रवृत्तियों को और विस्तार से शामिल किया जाता, तो शोध और अधिक मानवीय और सशक्त बन सकता था।

अनुसंधान पद्धति

यह अध्ययन अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान पर धार्मिक मान्यताओं, सामाजिक रीति–रिवाजों और जातिगत भेदभाव के प्रभाव का समाजशास्त्रीय विश्लेषण है। शोध गुणात्मक और आंशिक मात्रात्मक स्वरूप का है, जिसमें महिलाओं के अनुभवों, सामाजिक परिस्थितियों और धार्मिक–सामाजिक सहभागिता को समझने का प्रयास किया गया है।

शोध क्षेत्र

अध्ययन उत्तर भारत के चार ग्रामीण तथा अर्ध–शहरी क्षेत्रों में किया गया। इन क्षेत्रों का चयन उन स्थानों के रूप में किया गया जहाँ आज भी सामाजिक भेदभाव, जातिगत वर्चस्व और धार्मिक संकीर्णताएँ विद्यमान हैं।

नमूना निर्धारण

शोध में कुल 50 अनुसूचित जाति की महिलाओं को शामिल किया गया। इनका चयन सुलभ नमूना पद्धति द्वारा किया गया, ताकि भिन्न–भिन्न सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक पृष्ठभूमि वाली महिलाओं के अनुभवों को समावेशित किया जा सके।

डेटा संग्रहण की विधियाँ

- **साक्षात्कार विधि**

50 महिलाओं से व्यक्तिगत रूप से प्रत्यक्ष बातचीत द्वारा जानकारी एकत्रित की गई। साक्षात्कार अर्द्ध–संरचित प्रश्नावली के आधार पर किया गया, जिसमें भेदभाव के अनुभव, सामाजिक सहभागिता, धार्मिक आयोजनों में भागीदारी, शिक्षा और राजनीतिक जागरूकता से जुड़े प्रश्न सम्मिलित थे।

- **केस स्टडी विधि**

प्रत्येक क्षेत्र से 5–5 महिलाओं का चयन कर उनके व्यक्तिगत जीवन के अनुभव, पारिवारिक पृष्ठभूमि, धार्मिक रीति–रिवाजों और सामाजिक संघर्षों का विस्तृत केस अध्ययन किया गया।

- **अवलोकन विधि**

धार्मिक व सामाजिक आयोजनों में अनुसूचित जाति की महिलाओं की भूमिका का प्रत्यक्ष अवलोकन किया गया।

आंकड़ा संग्रहण और विश्लेषण की विधि

संग्रहित आंकड़ों का मैन्युअल वर्गीकरण किया गया। प्राप्त जानकारी को विषयानुसारांश श्रेणियों में विभाजित किया गया और प्रतिशत की गणना कर तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया।

प्रत्येक तालिका में प्राप्त आँकड़ों का तुलनात्मक और व्याख्यात्मक विश्लेषण किया गया, जिससे यह स्पष्ट किया जा सके कि अनुसूचित जाति की महिलाओं को सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक और राजनीतिक जीवन में किस प्रकार का भेदभाव और वंचना झेलनी पड़ती है।

प्रतिशत विधि द्वारा आंकड़ों की गणना की गई और उसे सारांशणीबद्ध कर व्याख्या के साथ प्रस्तुत किया गया।

अध्ययन की सीमाएँ

यह अध्ययन केवल 50 अनुसूचित जाति की महिलाओं तक सीमित रहा, जिसमें उत्तर भारत के कुछ चयनित क्षेत्रों को ही शामिल किया गया। अन्य राज्यों या समुदायों का तुलनात्मक विश्लेषण संभव नहीं हो सका।

साक्षात्कार के समय सामाजिक दबाव और भय के कारण कुछ प्रतिभागियों ने अपने अनुभवों को पूरी तरह प्रकट नहीं किया। इसके अतिरिक्त धार्मिक ग्रंथों और ऐतिहासिक दस्तावेज़ों की आलोचनात्मक समीक्षा का अवसर भी सीमित रहा।

डेटा विश्लेषण और व्याख्या

शोध के अंतर्गत अनुसूचित जाति की 50 महिलाओं से साक्षात्कार एवं केस स्टडी के माध्यम से जानकारी संकलित की गई। आंकड़ों का मैन्युअल वर्गीकरण कर विषयानुसारांश श्रेणियों में विभाजन किया गया

तथा प्रतिशत की गणना कर तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया। इसके आधार पर निम्नलिखित विश्लेषण किया गया:

तालिका 1: सामाजिक भेदभाव के अनुभव (प्रतिशत में)

अनुभव का प्रकार	उत्तरदाता प्रतिशत (%)
सार्वजनिक स्थानों पर अपमान	68%
मंदिर या धार्मिक स्थलों में भेदभाव	54%
स्कूल/कॉलेज में भेदभाव	42%
कार्यस्थल पर भेदभाव	50%
स्वास्थ्य सेवाओं में उपेक्षा	38%

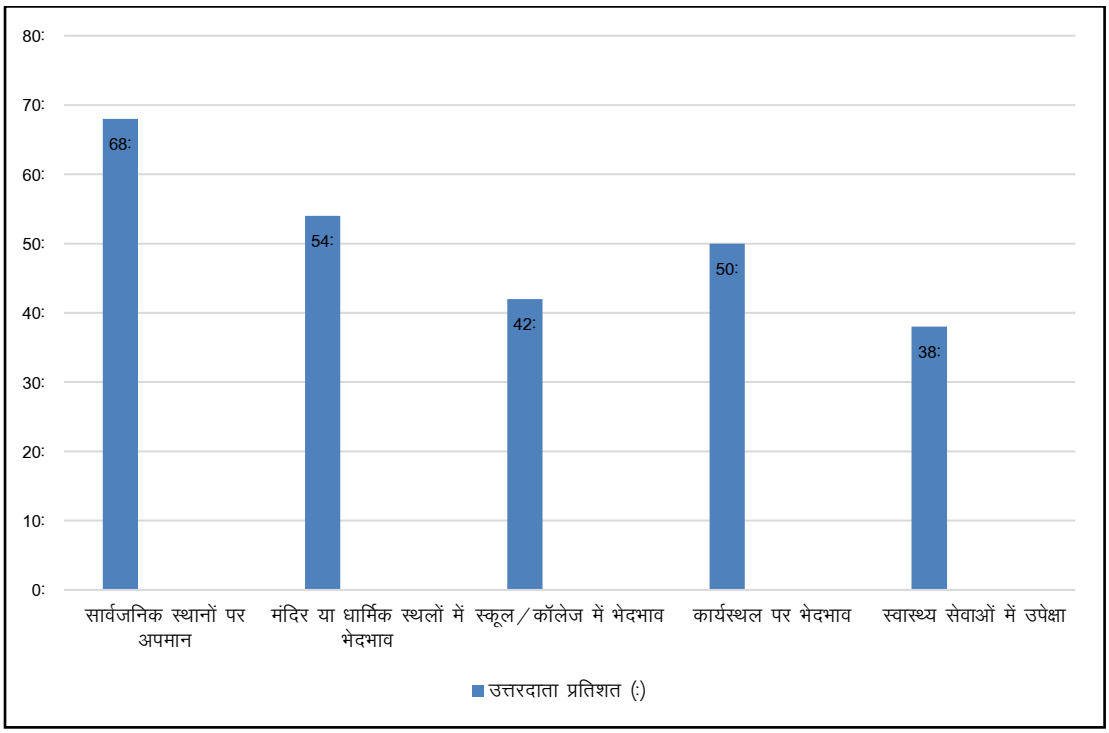

व्याख्या

ऊपर दी गई तालिका से स्पष्ट है कि अनुसूचित जाति की महिलाओं का 68: प्रतिशत सार्वजनिक स्थानों पर अपमानित होने का अनुभव करती हैं। मंदिर व धार्मिक स्थलों पर 54: महिलाओं ने भेदभाव महसूस किया। कार्यस्थल पर भी 50: महिलाओं ने असमान व्यवहार का सामना किया। इससे यह सिद्ध होता है कि जातिगत भेदभाव केवल निजी जीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक व सार्वजनिक स्थलों पर भी व्याप्त है।

तालिका 2: परिवार में लिंग आधारित भेदभाव (प्रतिशत में)

भेदभाव का प्रकार	उत्तरदाता प्रतिशत (%)
शिक्षा में अवसर की कमी	60%
विवाह में निर्णय का अधिकार न होना	76%
आर्थिक स्वतंत्रता की कमी	70%
स्वास्थ्य सेवा में प्राथमिकता की कमी	58%

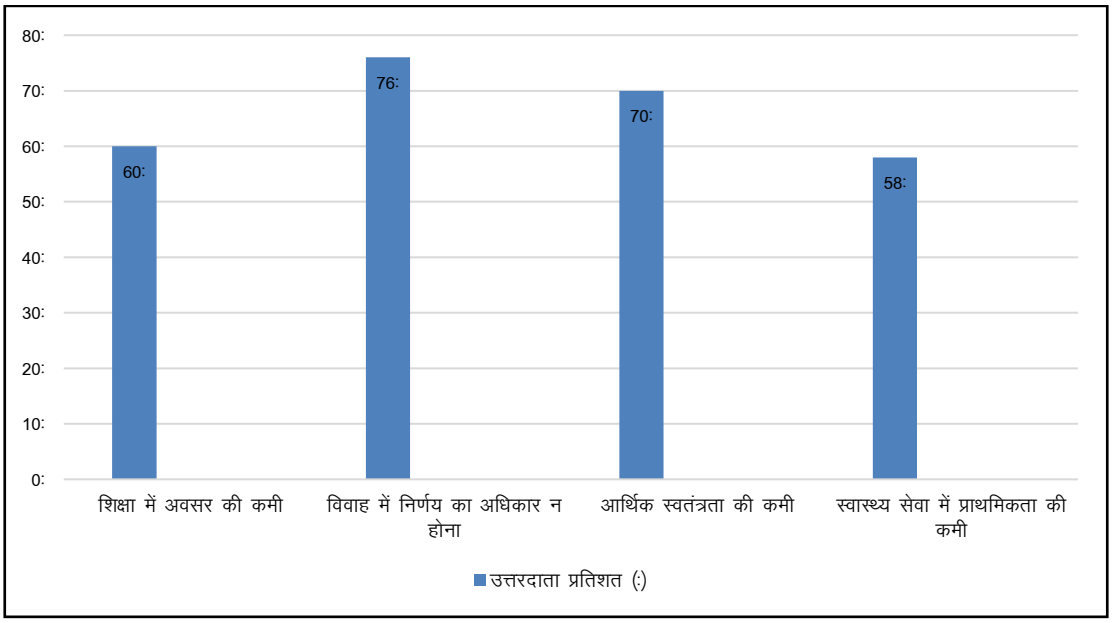

व्याख्या

तालिका से पता चलता है कि अनुसूचित जाति की 76: महिलाओं को अपने विवाह में निर्णय का अधिकार नहीं है। वहीं 70: महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं हैं। इससे स्पष्ट होता है कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था और जातिगत भेदभाव, दोनों मिलकर उनके अधिकारों का हनन कर रहे हैं।

तालिका 3: राजनीतिक सहभागिता (प्रतिशत में)

सहभागिता स्तर	उत्तरदाता प्रतिशत (%)
चुनाव में मतदान	90%
ग्राम सभा या पंचायत बैठक में भागीदारी	20%
राजनीतिक संगठन की सदस्यता	10%

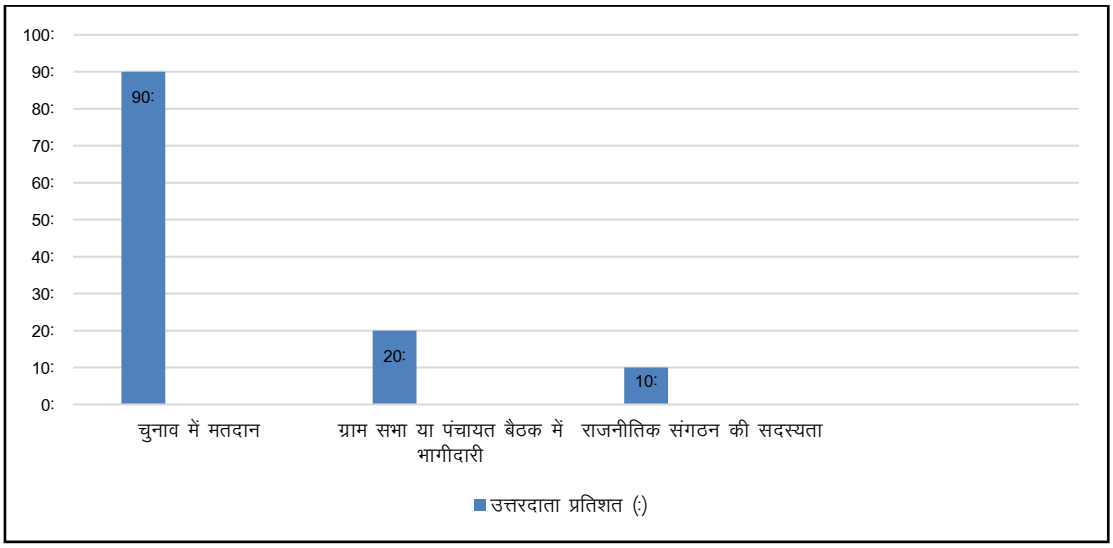

व्याख्या:

तालिका के अनुसारांश 90: महिलाएँ चुनाव में मतदान अवश्य करती हैं, लेकिन ग्राम सभा या पंचायत में भागीदारी केवल 20: महिलाओं की है। राजनीतिक संगठनों में उनकी भागीदारी और भी कम (10:) है। इसका कारण जातिगत व लैंगिक वर्चस्व और सामाजिक दबाव है, जो अनुसूचित जाति की महिलाओं को निर्णय–निर्माण प्रक्रियाओं से दूर रखता है।

तालिका 4: शिक्षा में अवसरों की उपलब्धता (प्रतिशत में)

शिक्षा स्तर	उत्तरदाता प्रतिशत (%)
प्राथमिक शिक्षा प्राप्त	85%
माध्यमिक शिक्षा प्राप्त	55%
उच्च माध्यमिक / कॉलेज	30%
स्नातक या उससे अधिक	10%

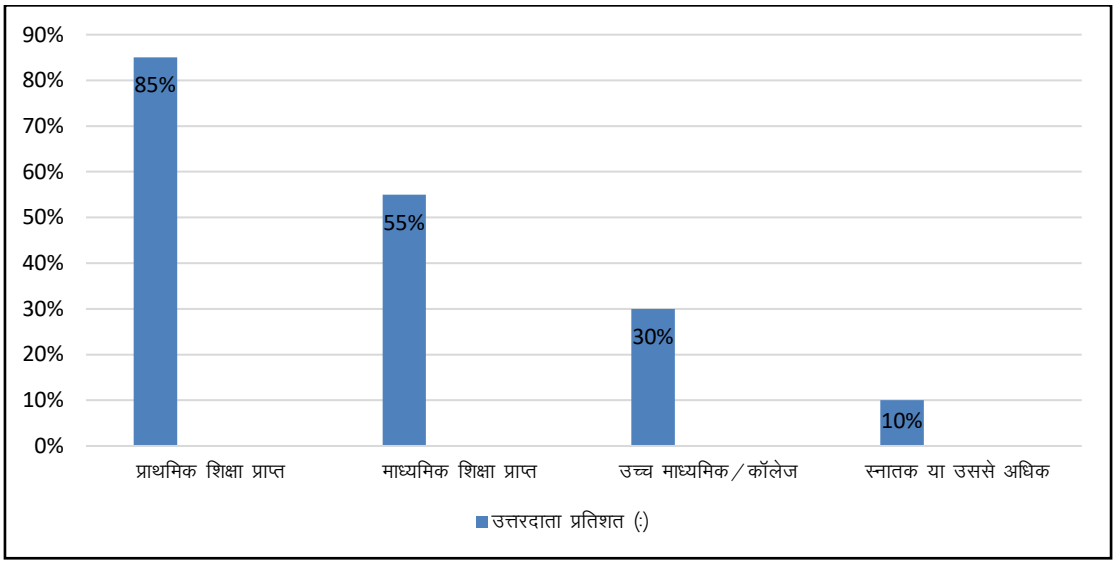

व्याख्या

तालिका के अनुसारांश अनुसूचित जाति की 85: महिलाएँ केवल प्राथमिक शिक्षा तक सीमित रहीं। माध्यमिक स्तर तक 55: महिलाएँ पहुँचीं, लेकिन उच्च माध्यमिक व स्नातक तक पहुँचने वाली महिलाओं की संख्या क्रमशः 30: और 10: ही है। इससे स्पष्ट है कि जातिगत भेदभाव और पारिवारिक–पितृसत्तात्मक सोच के कारण शिक्षा के उच्च स्तर तक उनकी पहुँच अत्यंत सीमित है, जो उनकी सामाजिक और लिंग पहचान को कमजोर करने में प्रमुख भूमिका निभाता है।

तालिका 5: धार्मिक व सामाजिक आयोजनों में भागीदारी (प्रतिशत में)

आयोजन का प्रकार	भाग लेने वाली महिलाओं का प्रतिशत (%)
धार्मिक उत्सव (समूहिक)	40%
जाति पंचायत या सामाजिक सभा	25%
सार्वजनिक सांस्कृतिक आयोजन	30%
नेतृत्व या आयोजक की भूमिका	8%

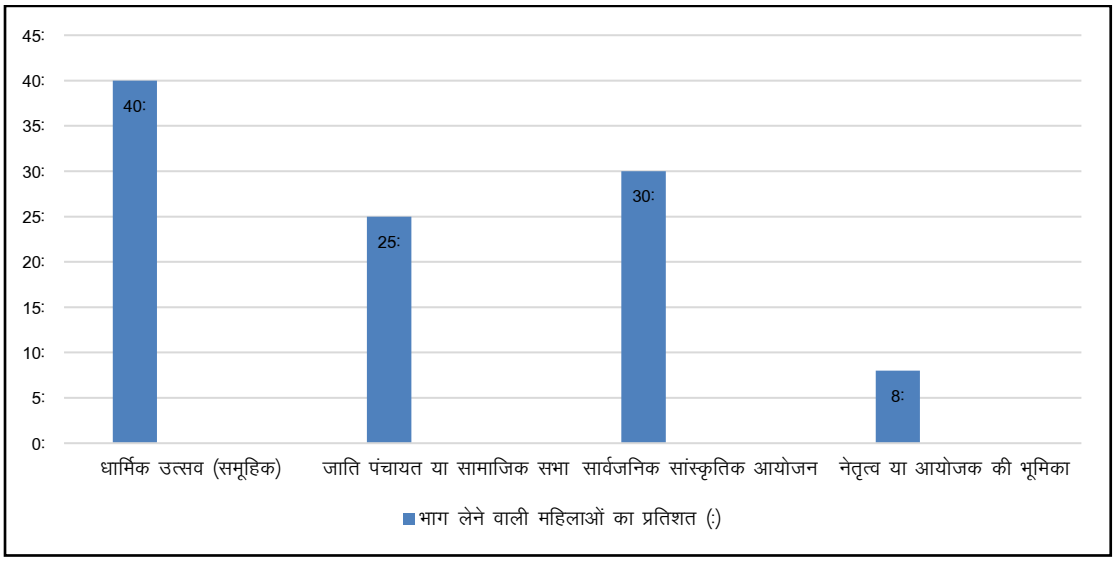

व्याख्या

तालिका के अनुसारांश केवल 40: महिलाएँ धार्मिक उत्सवों में भाग ले पाती हैं, जबकि सामाजिक सभाओं और पंचायतों में मात्र 25: महिलाएँ शामिल होती हैं। सार्वजनिक सांस्कृतिक आयोजनों में 30: सहभागिता पाई गई, परंतु नेतृत्व या आयोजक की भूमिका में मात्र 8: महिलाएँ देखी गईं। इसका अर्थ है कि अनुसूचित जाति की महिलाएँ सामाजिक सहभागिता और नेतृत्व के अवसरों से वंचित हैं। यह जातिगत व लैंगिक वर्चस्व का प्रत्यक्ष प्रमाण है, जिससे उनकी सामाजिक पहचान सीमित बनी रहती है।

सभी तालिकाओं का विश्लेषण बताता है कि अनुसूचित जाति की महिलाएँ सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक और राजनीतिक – हर स्तर पर बहुआयामी भेदभाव का सामना कर रही हैं। उनकी लिंग पहचान, जातिगत पूर्वाग्रहों और पितृसत्ता की जकड़ में बंधी है। भले ही राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि हुई है, परंतु वास्तविक भागीदारी और निर्णयाधिकार अब भी सीमित है। शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक सम्मान के अभाव ने उनके व्यक्तित्व और पहचान को प्रभावित किया है।

इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को जातिगत भेदभाव और पितृसत्ता की संयुक्त संरचना नियंत्रित करती है, जिससे सामाजिक समानता और लैंगिक न्याय की अवधारणा को गहरा आघात पहुँचता है।

निष्कर्ष

यह शोध–पत्र अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान के निर्माण में जातिगत भेदभाव की भूमिका को समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करने का प्रयास है। अध्ययन के निष्कर्ष यह स्पष्ट करते हैं कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति और लिंग – दोनों ही स्तरीकरण के सशक्त उपकरण हैं, जो अनुसूचित जाति की महिलाओं के जीवन को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक स्तर पर नियंत्रित करते हैं।

शोध के दौरान प्राप्त आंकड़ों और साक्षात्कारों के विश्लेषण से यह प्रमाणित हुआ कि अनुसूचित जाति की महिलाएँ सार्वजनिक, पारिवारिक, धार्मिक और संस्थागत प्रत्येक स्तर पर बहुआयामी भेदभाव और उपेक्षा का सामना करती हैं। उनकी लिंग पहचान न केवल पितृसत्तात्मक मूल्यों से, बल्कि जातिगत पूर्वाग्रहों और सामाजिक वर्चस्व की संरचनाओं से भी निर्मित होती है। विशेष रूप से सार्वजनिक स्थानों, कार्यस्थलों, स्वास्थ्य सेवाओं और धार्मिक स्थलों पर भेदभाव की घटनाएँ सामान्य रूप से विद्यमान हैं।

परिवार के भीतर भी इन महिलाओं को शिक्षा, विवाह, स्वास्थ्य और आर्थिक निर्णयों में अधिकार और स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है। राजनीतिक जागरूकता के बावजूद पंचायत और निर्णय निर्माण प्रक्रियाओं में उनकी सक्रिय भागीदारी अत्यंत सीमित है। इससे यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता की नीतियों का अपेक्षित प्रभाव अनुसूचित जाति की महिलाओं तक समुचित रूप में नहीं पहुँच सका है।

अध्ययन इस ओर संकेत करता है कि अनुसूचित जाति की महिलाओं की लिंग पहचान को स्वतंत्र और सशक्त बनाने के लिए केवल पितृसत्ता के विरुद्ध संघर्ष पर्याप्त नहीं, अपितु जातिगत वर्चस्व की संरचना का भी विश्लेषण और प्रतिरोध आवश्यक है। इसके लिए दलित स्त्रीवाद के दृष्टिकोण और दृष्टिबोध को नीतिगत, शैक्षिक और सामाजिक अभियानों में सम्मिलित करना होगा।

अंततः यह निष्कर्ष निकलता है कि जब तक जाति और लिंग आधारित भेदभाव की संयुक्त संरचना को तोड़ा नहीं जाएगा, तब तक अनुसूचित जाति की महिलाओं की पहचान, सम्मान और अवसरों की समानता संभव नहीं। सामाजिक पुनर्संरचना, संवेदनशील नीति निर्माण और समावेशी जागरूकता अभियानों के माध्यम से ही इस दिशा में सार्थक परिवर्तन लाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिन्हा, अर्चना. (2019). जातिगत वर्चस्व और दलित महिलाएँ. सामाजिक विमर्श, 15(1), 58–74।
2. गोपाल, राधा कृष्ण. (2016). भारतीय सामाजिक व्यवस्था. विद्या पब्लिशिंग हाउस।
3. कुमार, रामनाथ. (2022). दलित महिलाओं के सामाजिक अधिकारः कानूनी और सामाजिक दृष्टि. समाजशास्त्रीय शोध, 30(2), 22–40।
4. पाटिल, मंजुला. (2023). दलित महिला आंदोलनः संघर्ष और चुनौतियाँ. प्रभात प्रकाशन।
5. भारतीय महिला आयोग. (2020). अनुसूचित जाति की महिलाओं की स्थिति पर विशेष रिपोर्ट. नई दिल्ली।
6. मिश्रा, कविता. (2017). दलित महिलाओं का सामाजिक सशक्तिकरणः एक आलोचनात्मक अध्ययन. नारी विमर्श पत्रिका, 8(2), 12–28।
7. गौतम, सावित्री बाई. (2018). दलित नारी चेतना. हिंदुस्तान पब्लिशिंग।
8. सेन, अमर्त्य. (1999). विकास एक स्वतंत्रता के रूप में. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. शारदा, पूनम. (2021). भारतीय समाज में दलित स्त्री पहचान की समस्याएँ. समाज विचार, 27(3), 33–51।
10. चौधरी, नीना. (2015). दलित महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी. नई दिल्लीः सेज प्रकाशन।

❖◆❖